INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD)
© 2026 IJNRD | Volume 11, Issue 2, February 2026 | ISSN: 2456-4184 | IJNRD.ORG

हिंदी भाषा, साहित्य और बाजारवाद

डॉ. दादासाहेब नारायण डांगे
सहयोगी प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
कला, विज्ञानएवं वाणिज्य महाविद्यालय, राहाता
मेल-dndange@gmail.com.

शोधसारांश:

आज भूमंडलीकरण का युग है। समाज में उपभोक्तावादी संस्कृति को बढ़ावा मिल रहा है। ऐसे में समूचा विश्व एक व्यापक बाजार का रूप ले चुका है। समाज का प्रत्येक क्षेत्र आज बाजारवाद से प्रभावित है। समाजवाद और साहित्य का अटूट संबंध तो पहले से ही अधोरेखित हुआ है। ऐसे में हिंदी भाषा और साहित्य पर भी बाजारवाद का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही है। हिंदी भाषा को आज विश्व बाजार में बहुत अधिक महत्व प्राप्त हुआ है। हिंदी के बल पर ही बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ भारत में अपने पैर जमा चुकी है। हिंदी साहित्य भी आज व्यावसायिक दृष्टिकोन को ध्यान में रखकर लिखा जा रहाहै। कवि, लेखक, प्रकाशक तथा आलोचक भी अपने सिद्धांतों को अलग रखकर अर्थ प्राप्ति को ही अपना कवि कर्म मान रहे है।च्यूँकि, आधुनिक काल की शुरुवात में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदीजीने कवि कर्तव्य जैसे निबंध लिखकर उनके द्वारा तत्कालीन कवि एवं लेखकों को अपने कर्तव्यों के प्रति सजग किया था। परंतु आज हिंदी साहित्य में इस प्रकार के मूल्य नहीं दिखायी दे रहें हैं, यह बड़े ही खेद का विषय है। इससे यह स्पष्ट होता है कि, हिंदी भाषा तथा साहित्य पर बाजारवाद का गहरा प्रभाव है। परंतु इससे एक ओर तो मूल्यों में गिरावट आती जा रही है, रिश्तों में दरार पड़ रही है, माननीय संबंध बिखरकर टूट रहें हैं, तो दुसरी ओर हिंदी भाषातथा साहित्य को भी विश्वस्तर पर विशेष महत्व मिल रहा है। हिंदी विश्व बाजार की एक महत्वपूर्ण कड़ी बनती जा रही है और हिंदी साहित्य में भी प्रचूर मात्रा में परिवर्तन हो रहे हैं। साथ ही हिंदी भाषा तथा साहित्य का भी वैश्विक स्तरपर प्रचार- प्रसार बढ़ रहा है, इसमें दो राय नहीं।

बीजशब्द:बाजारवाद, उपभोक्तावाद, भौतिकवाद, वैश्विकता, संस्कृति, मूल्य, मानवीय संवेदना, उपनिवेशवाद, भूमंडलीकरण, पूँजिवाद, व्यापार, व्यावसायिकता, समकालीनता, सामाजिकता औररचनाधर्मिता आदि।

प्रस्तावना:

हिंदी साहित्य पर बाजारवाद का बहुत अधिक गहरा प्रभाव दिखाई देता है। प्राचीन काल से साहित्य को एक कलाके रूप मे देखा जा रहा था, परंतु आज साहित्य बाजारवाद के दौर में एक वस्तू के रूप में परोसा जा रहा है। साहित्य में आज मानवता एवं सामाजिकता से अधिक व्यावसायिकता को महत्व दिया जा रहा है। आज बाजारमेंसमाज उपयोगी पुस्तकों से भी अधिक सनसनीखेज,सस्ती तथा मनोरंजन से भरपूर पुस्तकों का महत्व बढ़ाहै। वही किताबें आज बाजार मेंअधिक मात्रा में बिक रही है।इसके कारण कई प्रतिभाशाली साहित्यकार पीछे रहे जाते हैं और उनका साहित्य मूल्याधिष्ठित होकर भी महत्वहीन समझा

जाता है। आज उपन्यास, कहानी, कविता तथा अन्य साहित्य की विधाओ में आधुनिकता के नाम पर मूल्यहीनता, सांस्कृतिक विकृतियों एवं पाश्चात्य सभ्यता को बेझिझक उकेरा जा रहा है और मानवीय भावनाओं,मूल्यों को नजरंदाज किया जा रहा है। इसके अलावा बाजारवाद का एक दुसरा पहलू भी है, जिसमें हिंदी को बाजारवाद की दुनिया मे एक महत्त्वपूर्ण बाजार की भाषा के रूप मे स्थापित किया गया है। हिंदी अब बाजारवाद की एक महत्वपूर्ण एवं प्रभावी भाषा बन चुकी है, जिसे नकारा नही जा सकता।इससे यह स्पष्ट है कि, हिंदी भाषा, साहित्य एवं बाजारवाद का अंत:संबंध है।

बाजारवाद और हिंदी साहित्य के कुछ महत्वपूर्ण पहलू:

रचनाधर्मिता में परिवर्तन: पहले लेखक आत्मतृष्टि के लिए साहित्य लेखन करता था। साथ ही अपने लेखन के माध्यम से जन मानस को भी अपने साहित्य में बखुबी उतारता था। अर्थात स्वान्त: सुखाय को महत्व देता था, जिसे हम तुलसीदास के शब्दों में 'बहुजन- हिताय, बहुजन सुखाय' कह सकते हैं। इसकी जगह आज अर्थ प्राप्ति के लिए साहित्य सृजनहो रहा है। लेखक और प्रकाशक मिलकर आज व्यावसायिक उद्देश्य को ध्यान में रखकर अपना काम कर रहें हैं, जिससे साहित्य का मूल उद्देश्य मर- सा गया है।

गुणवत्ता पर प्रभाव: आज दुनियाभर में अधिक बिकने वाली पुस्तकों को महत्व दिया जा रहा है, चाहे उनमें साहित्यिक तत्वोंका अभाव ही क्यों न हो।जिसके कारण अच्छा साहित्य दब- सा जा रहा है।

मानव- मूल्यों में गिरावट: बाजारवाद के चलते भौतिकवादी और उपभोक्तावादी संस्कृति को बढ़ावा मिला है। जिसके कारण रिश्तों में दरारें आने लगी हैं। पारिवारिक मूल्य बिखरते जा रहें हैं। यह समकालीन कथा साहित्य का प्रमुख विषय बन गया है।

प्रकाशक, साहित्यकार एवं पाठक के संबंध: आज का साहित्य देखकर ऐसे लग रहा है, जैसे लेखक मजदूर है और प्रकाशक मालिक। प्रकाशक जैसे कहेंगे वैसे ही लेखक साहित्यलिखेंगे। जिससे आदर्श साहित्य का निर्माण होनाअसंभव है। आज के आलोचक भी पैसों के लिए साहित्य आलोचना करते हैं। इसीलिएपाठकों का उनपर से विश्वास कम होता जा रहा है।

इतना सबकुछ होने के बावजूद भी हिंदी के संदर्भ में बाजारवाद के कुछ सकारात्मक पहलू भी है। आज विश्वस्तर पर हिंदी का महत्व बढ़ रहा है। देश की आबादी के चलते बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ देश में व्यावसायिक दृष्टिकोन को मद्देनजर रखकर अपने पैर जमा रही है। जिसके लिए उन्हें हिंदी भाषा की आवश्यकता पडने लगी है। इसी के साथ ही व्यापार के कारण हिंदी भाषा की पुस्तकेंअधिक से अधिक लोगों तक पहुँच रही है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि,हिंदी विश्व बाजार में एक प्रभावी एवं महत्त्वपूर्ण भाषा के रूप में उभर चुकी है। बाजार और तकनिकी विकासके कारण हिंदी का प्रचार- प्रसार विश्वस्तर पर व्यापक रूप से हुआ है। हिंदी आज विश्व के कई विश्वविद्यालयों में पढ़ायी जा रही है। इससे विदेशों में हिंदी अध्यापकों के लिए रोजगार मिल रहा है। इससे विश्वस्तर पर हिंदी की स्थिति मजबूत हो रही है। डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय का उक्त कथन इस बात की पुष्टी करता है। उन्होंने कहा है, "बाजार और तकनीकी कारणों से

हिंदी प्रसार से हिंदी के हजारों अध्यापकों को विदेशों में रोजगार मिलने वाला है। दूसरी ओर हिंदी के विश्वव्यापी प्रसार से देश में उसकी स्थिति अधिक मजबूत होने की उम्मीद है।''**1**

भूमंडलीकरण के कारण साहित्य का स्वरूप भी बदल सा गया है। आज बाजार की आवश्यकता को ध्यान में रखकर साहित्य की वस्तू, शिल्प तथा उद्देश्य को बदला जा रहा है। साहित्य में आज मनोरंजन, रोचकता, उत्तेजना, सनसनीखेज घटनाओंका अधिक समावेश दिखायी दे रहा है। एक अर्थ में कहा जाये तो, साहित्य को ही बाजार का रूप दिया गया है। पुस्तकों के विपणन के लिए नयी-नयी तकनीक प्रयोग में लायी जा रही है। आज लेखक एक दिन में ही साहित्य का निर्माण कर प्रकाशकों को बेच रहें हैं और अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहें हैं। इस कारण साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय मूल्यों में गिरावट आ गयी है।उपभोक्तावादी संस्कृति एवं भूमंडलीकरण का प्रभाव हिंदी कथा साहित्य पर साफ- साफ दिखायी देता है। समकालीन हिंदी कथा साहित्य में इस प्रकार की स्थितियों को हम बखुबी देखते है। मन्नू भंडारी, राजेंद्र यादव, ममता कालिता, निर्मल वर्मा, अलका सरावगी जैसे कई समकालीन कहानी तथा उपन्यास लेखकों की कहानियों तथा उपन्यासों में बाजारवाद के प्रभाव को देखा जा सकता है। ममता कालिया रचित उपन्यास 'दौड़' में पवन के लिए मानवीय संबंधों का कोई अर्थ नहीं है। वह न तो अपने माता- पिता के साथ उनका बेटा होने का फर्ज निभा पाता है और नही अपनी पत्नी स्टेला के साथ सुख से रह पाता है। समाज, सभ्यता, परंपराएं, पारिवारिक संबंध उसके लिए कोई मायने नहीं रखते। दौड़ उपन्यास में प्रस्तुत उसका यह कथन, ।मैं ऐसे शहर में रहना चाहता हुँ, जहाँ कल्चर हो ना हो, कंज्यूमर कल्चर जरूर हो। **2** साहित्य पर पड़ रहें बाजारवाद के प्रभाव को बखुबी उजागर करता है।

अलका सरावगी रचित उपन्यास 'कलिकथा वाया बायपास' में मनुष्य की उपभोक्तावादी प्रवृत्ति को अत्यंत मार्मिकता से प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत उपन्यास में किशोर नामक पात्र के बेटे के उक्त संवाद, ।पापा आप किस दुनिया में रह रहें हैं, आपको कुछ होश है? पहले जमाने में आदमी शांति से रह सकता था। आज नहीं रह सकता। पहले इतनी चीजे कहां थी? आज आदमी चाहे भी तो पहले की तरह नहीं रह सकता"।**3** यह स्पष्ट करते हैं कि, नई पीढ़ी पर पाश्चात्य सभ्यता पूरी तरह हावी हो चुकी है। 20वीं शताब्दी के अंतिम दशक में जिस तेजी के साथ समय में परिवर्तन आया और सामाजिक जीवन का प्राय: प्रत्येक क्षेत्र प्रभावित हुआ, उसे हिंदी उपन्यासों ने यथार्थ रूप में चित्रित करने की महत्त्वपूर्ण कोशिश की है..... ''यह वह दौर है जब सूचना क्रांतिने सदियों पुराने भारतीय समाज के ताने- बाने को तहस नहस किया। बाजारवाद का प्रभुत्व कायम होने लगा। मानवीय संबंधों के मान बदलने लगे। जीवन की बुनियादी प्रवृत्तियों में भी तेजी से बदलाव हुआ। राजनीति भी बदली। उसके भी मान मूल्य बदले। जनता के प्रति उसकी पक्षधरता में कमी आयी। सांप्रदायिकता उभरी। जातियों के बीच भेदभाव पैदा हुआ। ऐसे में सब भौंचकरह गये है कि, उनकी क्या भूमिका हो?''**4**

उपरयुक्त स्थितियों को देखकर यह स्पष्ट होता है कि, आज बाजारवाद के चलते भाषा और साहित्य में मिलावट दिखायी दे रही है। साथ ही लेखकों, प्रकाशकों एवं आलोचकों के कर्म में भी मिलावट दिख रही है। परंतु सवाल यह है कि, क्या इस मिलावट का नई पीढ़ी स्वीकार करेगी? और अगर करेगी भी तो क्या उसके

लिए यह ठीक होगा? क्योंकि आनेवाले समय में भाषा में हो रही इस मिलावट का समाज का पूँजिपति भी स्वागत करता हमें दिखायी दे सकता है। इसीलिये हमें इसपर सोचना होगा, कि क्या यह सही रहेगा। इसपर डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय ने अपनी पुस्तक 'बाजारवाद और हिंदी' की भूमिका में अपने विचार प्रस्तुत किए हैं, जो इसप्रकार हैं- "भूमंडलीकरण या बाजारवाद के दौर में भाषा में बेइंतहा मिलावट को संभवत: नई पीढ़ी स्वागत करेगी। उसके लिये यह कुछ अस्वाभाविक नही है। परंतु जिस चीज का यह पीढ़ी स्वागत कर रही है, उसका पूँजिपति भी स्वागत कर रहा है। जिसके लिए नई पीढ़ी और भाषा दोनों वस्तू है। कदाचित थोडी दूर हटकर यदि हम इस मिलावट पर बाजार की दृष्टि से नहीं, भाषा और साहित्य की दृष्टि से भी विचार करे तो शायद किसी सही निष्कर्ष पर पहूँच सके"5

निष्कर्ष:

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि, बाजारवाद ने हिंदी साहित्य को काफी हद तक प्रभावित कर दिया है। हिंदी साहित्य आज दो राहों पर खड़ा दिख रहा है। बाजारवाद एक ओर हिंदी को व्यापक बाजार दे रहा है और दुसरी ओर हिंदी साहित्य की मौलिकता एव माननीय संवेदनाओं को भी सीधे चुनौती दे रहा है। इससे समकालीन हिंदी साहित्य में बाजारवादी संस्कृति का प्रभाव पड़ा है और उसके दुष्परिणाम भी दिखायी दे रहें हैं। प्राचीन तथा मध्यकालीन साहित्य में हम देखते हैं कि, आपसी प्रेम, सौहार्द, संवेदना, मानवता, मूल्य भावना, लोककल्याण आदि का अधिक चित्रण मिलता है। इसीलिए बाजारवाद तथा हिंदी साहित्य का दूर-दूर तक कोई संबंध नहीं दिखायी देता। परंतु समय के साथ साहित्य में भी बदलाव होने लगा। बाजारवादी तथा उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रभाव शुरू हुआ। जिससे हिंदी साहित्य भी प्रभावित हुआ। अब साहित्य को व्यावसायिक दृष्टिकोण से देखा जाने लगा है। बाजार के लिए अब मनुष्य को बाहर जाने की आवश्यकता नहीं रही है। बाजार आज स्वयं मनुष्य के घर तक पहुंच गया है। आज बाजारवाद के मूल्य बिखर गये हैं और व्यापार को अधिक महत्व मिल गया है। व्यापार आज स्वार्थता एव धूर्तता का पर्याय बन चुका है। इसीलिए आज साहित्यकार भी तत्कालीन परिस्थितियों को समझकर लेखन कर रहा है। लेखकों तथा प्रकाशकों के साथ- साथ आलोचकों के दृष्टिकोण को भी बाजारवाद ने बदल दिया है। आज मूल रचनाधर्मिता नष्टप्राय हो चुकी है। साथ ही लेखकों, प्रकाशकों एवं समीक्षकों के उपर से पाठकों का विश्वास भी कम होता हुआ नजर आ रहा है। इसीलिये इसपर गंभीरता से सोच- विचार करने की आवश्यकता है।

संदर्भ:

1. श्रोत्रिय,डॉ. प्रभाकर,बाजारवाद में हिंदी,पृष्ठ- 1
2. कालिया,रवींद्र,संपा. नया ज्ञानोदय, अंक 90, अगस्त 2010, पृष्ठ- 48
3. सरावगी,अलका,कलिकथा वाया बायपास, उपन्यास, पृष्ठ- 27
4. जोशी,ज्योतिष,उपन्यास की समकालीनता, पृष्ठ- 151

5. श्रोत्रिय,डॉ. प्रभाकर, बाजारवाद में हिंदी,भूमिका

6. कालिया,ममता,दौड़, उपन्यास

7. श्रोत्रिय,डॉ. प्रभाकर,हिंदी: कल आज और कल, संपा.

8. पचौरी,सुधीर,उत्तर आधुनिक साहित्य विमर्श,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1996

9. डॉ. नगेंद्र,हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपर बैक्स, नई दिल्ली

• **Copyright & License:**
© Authors retain the copyright of this article. This work is published under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0), permitting unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.